International Referred Research Journal, November, 2011,ISSN- 0975-3486.RNI : RAJBIL 2009/30097,VOL-III * ISSUE 26
शोध पत्र- हिन्दी

बीसवी सदी के अंतिम दशक के उपन्यासों में नारी चेतना

* प्रा. डॉ. देवकीनंदन महाजन
* रुख्मिणीताई कला व वाणिज्य महिला महाविद्यालय, अमळनेर

November, 2011

अंतिम दशक के हिन्दी उपन्यास साहित्य में विविध विषयों का उद्‌घाटन हुआ है। महिला उपन्यासकारों का उसमें विशेष योगदान रहा है। नारी मुक्ति की अवधारण को ध्यान में रखते हुए सृजित साहित्य नारी चेतना के अंतर्गत आता है। यह माना जाता है कि स्वयं भुक्त-भोगी होने के कारण नारी अपनी समस्याओं को और अधिक प्रामाणिक ढंग से चित्रित कर सकती है।

नारीजाति का सबसे बडा शत्रु पितृसत्ताक समाज है। इसलिए नारी लेखन का पहला उद्देश्य इस पितृसत्ताक समाज को खत्म करना है। वैसे तो अनादि काल के पितृसत्ता का विरोध परोक्ष रुपसे नारी करती आयी है जिनमें सती, सावित्री, सीता, द्रौपदी, से लेकर रजिया, सुलताना, लक्ष्मीबाई, आदि कई नाम गिने जा सकते है। ये नारियाँ समय-समय पर पुरुष समाज के सामने पितृसत्ताक पध्दति को विरोध करते हुए अपनी शक्तिका परिचय देती रही ।

भारत में नारी चेतना का विकास स्वतंत्रता के पश्चात होने लगा। आठवे-नौवे दशक के उपन्यास साहित्य में उसमें प्रचंड उभार आया। विशेषत: उनमें महिला उपन्यासकारों ने अपने अधिकारों की मांग के लिए सृजन किया जिनमें प्रमुख रुप से प्रभाखेतान, मैत्रेयी पुष्पा, चित्रा मुद्‌गल, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, उषा प्रियवंदा, अलका सरावगी, मंजुल भगत, आदि कई नाम गिने जायेंगे।

विवेच्य अवधि में कई महिला कथाकारों ने नारी के विद्रोही रुप को उद्‌घाटित करने का सफल प्रयास किया है। उनके नारीपात्र अपने पर हो रहे अन्याय का साहस के साथ विरोध कर रही है। जिनमें प्रमुख रुप से शरत कुमार कों 'शिखर और सीमाँए' (१९९३), सुरेन्द्र वर्मा का 'मुझे चांद चाहिए' (१९९३), प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' (१९९३), मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नमम' (१९९४) आते है।

स्त्री-पुरुष संबंधों के बीच आते गतिरोधों को चित्रित करने वाला शरतकुमार के ***'शिखर और सीमाएँ'*** उपन्यास के दीप्ति और विनय में अपार प्रेम है। दोनों की जिन्दगी एक-दूसरे से प्रेम पर टिकी हुई है। पर कुछ दिनों बाद दीप्ति को लगता है, विनय के लिए वह एक निर्जीव वस्तु में बदलती जा रही है। उसका विवाह एक बन्धन बन रहा है। इसलिए वह समरेश से जुडती हुई विनय का थोथा प्रेम एक झटके से तोड देती है। वह पुरुष के साथ बराबरी चाहती है। पिता के सलाह पर भारतीय युवक विनय से विवाहित तो होती है पर उनमें वह अधिकारोन्मत पुरुष को देखकर सोचती है कि इस संबंध को ढोना अपनी जिन्दगी गिरवी रखने जैसा है। आज प्रेम की इच्छा-आकांक्षा, और उसकी परिणति को इस रुप में देखा गया है कि वह आगे जाकर भोग और मानसिक शोषण में विलिन हो जाता है। प्रेम-प्रेम न रहकर वासना का रुप ले लेता है। इसलिए दीप्ति जैसी पढी-लिखी स्त्री प्रेम के इस रुप में आस्था रखती है। "इसमें संदेह नहीं कि उपन्यास में स्त्री-पुरुष संबंधों के बीच बीच प्रेम के माध्यमसे एक 'जीवनगत आस्था' खेजने की चेष्टा है"। प्रेम एक-दूसरे के विश्वास पर टीका होता है परंतु जब विश्वास खत्म हो जाता है तब वैवाहिक संबंधों को तोडने के लिए स्त्री मजबूर हो जाती है। यही नारी चेतना है।

'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास में सुरेन्द्र वर्मा ने भारतीय परंपरागत विवाह संस्था के खिलाफ वर्षा के विद्रोह को अभिव्याक्ति दी है। रोहिणी अग्रवाल लिखती है, "मुझे चाँद चाहिए' वर्षा वाशिष्ठ के औदात्य और उन्नयण का आख्यान है जो परंपराओ, वर्जनाओं और पुरुष की बैसाखियों को झटक कर अपनी स्वतंत्रता स्थापित करने वाली संघर्षशील आधुनिक स्त्री का मिथ रचता है।"[२] वर्षा जीवन में घर-गृहस्थी को नकारती हुई कला को महत्वपूर्ण मानती है।विवाह करने से इन्कार करती है तब उसकी बहन गायत्री उसे विवाह करने के लिए प्रेरित करती हुई वैवाहिक जीवन के आनंद से अवगत कराती है। वर्षा उसके प्रस्ताव को ठुकराती है, "केवल मादा बनकर मुझे रहना पसंद नही है, मैं सिर्फ मादा नहीं हूँ।"[३] वर्षा का इस प्रकार के तिरस्कार को देखकर तथा वह किशोरावस्था से लेकर अपनी सफलताओं तक पहुँचते-पहुँचते जिन-जिन अपमान पूर्ण रास्तों से गुजरती है उससे यह निश्चित रुपसे कहा जा सकता है कि नारी स्वतंत्रता की राह उतनी आसान नहीं है। प्रत्येक मोड पर उसकी स्वाधिनताओं के शत्रू बैठे हुए है, उनमे पिता भाई-बहन, अन्य रिश्तेदार भी हो सकते है। निम्न मध्यवर्गीय ब्राम्ह्ण परिवार की तमाम मर्यादाओ को ठुकराते हुए स्कुल जानेवाली पढी-लिखी यशोदा शर्मा परंपराको विरोध करती हुई अपना नाम बदलकर वर्षा वशिष्ठ कर लेती है तब पिताजी उसे पुछते है कि 'नाम क्यो बदला' का जबाब देते हुए जो कहा वह "निम्नमध्यवर्गीय परिवार में छोकरी समझी जानेवाली लडकी का उत्तर नही है सिर्फ, तमाम उन लडकियों की जबान है..... जैसे कि क्यों पैदा हुई, इस जीवन का उद्देश्य क्या है, क्या उन्हे भी वैसा ही जीवन जीना होगा जैसा.....जो प्रत्येक स्त्री को अपनी पहचान दे..... एक घिसा पिटा दकियानुसी नाम। उन्होंने किया क्या था ? शिवाय किशन को पालने के ? और छहों ऋतुओं में ऋतुसंहार पढते हुए मुझे वर्षा सबसे अच्छी ऋतु लगी।"[४] वर्षा का यह विद्रोह अपने पुरानी परंपरा से है। उपन्यास की दीव्या कात्याल अपने जातिबाह्य युवकसे प्रेम करके विद्रोह करती है।

'छिन्नमस्ता' प्रभाखेतान का रखैल के अधिकार के प्रति नरेंन्द्र के खिलाफ विद्रोह व्यक्त करनेवाला उपन्यास है। नरेंद्र अपनी पत्नी प्रिया को काबू में रखना चाहता है परतुं वह नरेंन्द्र की बात न

मानती हुई अपने बेटे संजू को तिलोत्तमा के घर ले जाती है जिसे नरेंन्द्र के पिता रखैल समझते है। वह क्रोधित होकर जबाब मांगता है तब प्रिया तिलोत्तमा का पक्ष लेते हुए कहती है, "क्यो ? क्या चुटकीभर सिंदूर से ही पत्नी कहलाने का हक मिला जाता है और बीस वर्षे बिना सात फेरे के संबंध को यों ही नकार दिया जा सकता है।"[५] प्रिया की दृष्टि से बिना शादी - ब्याह करके भी पति-पत्नी के रुप में रहा जाता है। प्रिया में रखैल नारी के अधिकारों के प्रति विद्रोह दिखाई देता है।

'इदन्नमम' मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास में नारी विद्रोह कुट-कुट कर भरा है। उपन्यास के सभी नारी पात्रों में विद्रोह का भाव है। उपन्यास का पूरा कथानक मंदा बऊके आसपास मंडराता है। प्रेम की सास बऊ वैधव्य की चौखट में बद रहकर सभी मर्यादाओं का पालन करती है। प्रेम का जीजाजी उनके घर बार-बार आता है, बेधडक घर में आना-जाना रखता है तब उसकी सास कहती है, तुम्हारे जीजाजी है तो मर्यादाओं में रहे। मर्द मानसों की तरह चौपाल परही बैठै। कोई इज्जत आबरुं का खयाल है ? तब प्रेम वैधव्य की मर्यादाओं का विद्रोह करती है, "बाई तुम अपने दिमाग में शको-सुबह का कीडा न रेंगाओं। जे फितूर न पालो अपने मगज में, विरथां कुढती रहोगी।"[६] प्रेम बेझिझक सास से विरोध करती हुई विधवा जीवन में जीजाजी के आगमन को स्वीकारती है। वह परंपरागत वैधव्य की चौखट को लांघकर विरोध प्रकट करती है। उपन्यास की मंदा और कुसुमा ग्रामिण जीवन की अनीति और क्रुरता का भंडाफोड करती है। कुसुम अपने क्रुर पति से ऊबकर दाऊ के साथ यौन संबंध स्थापित करके विद्रोही बन जाती है। यहाँ तक कि वह मंदा जैसी असहाय लडकी पर बलात्कार करनेवाले कौलाशपर लाठी का प्रहार करती हुई अपने विद्रोह को तीव्र करती है।

निष्कर्षत : कहा जा सकता है कि अंतिम दशक में नारी चेतना को लेकर कई हिन्दी उपन्यासकारोंने उपन्यासों का सृजन किया है। उनमें प्रमुख रुप से शरतकुमार प्रभाखेतान, सुरेन्द्र वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, आदि नाम उल्लेखनिय है। नारी स्वयं भुक्तभोगी होने के कारण अपने अनुभवों को यथार्थ रुपसे अभिव्याक्ति दे रही है। स्वतंत्रता के बाद अंतिम दशक तक पहुँचते-पहुँचते नारीने शिक्षा के क्षेत्र में अपने पांव जमा लिए परिणामत: उनमें अपना अस्तित्व बोध जागृत हुआ, फलत: वह पुरुषोद्वारा होने वाले अन्याय, अत्याचार का खुलकर विरोध करने लगी और अपने समानाधिकार की मांग करने लगी तथा न मिलने पर विद्रोह करने लगी । शिक्षा के बढते प्रभाव के कारण वह विवाह संस्था को नकारते हुए अपने कैरियर को प्रथम स्थान देती है। इस प्रकार अंतिम दशक का उपन्यास साहित्य शिक्षित-अशिक्षित नारियों में चेतना जगाने का काम करता है।

संदर्भ ग्रंथ

१) ज्योतिष जोशी, उपन्यास की समकालीनता, पृ. ६० २) रोहीणी अग्रवाल, इतिवृत्तकी संरचना और स्वरुप, पृ.१११ ३) सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चांद चाहिए, पृ. ४५ ४) विजय बहादुर सिंह, उपन्यास: समय और संवेदना, पृ.३५ ५) प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, पृ.१४६ ६) मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम, पृ.२८